THE TIMES OF INDIA

Date: 06-11-26

Agnipath, The Remake

Yes, the 4-year service for jawans was problematic given social realities. But what about modernisation?

TOI Editorials

In effectively creating a pathway for permanent enrolment of all Agniveers – subject to willingness and selection criteria – GOI has walked back a measure it introduced. Agnipath was launched four years ago, aimed at cutting manpower flab, and freeing up finances for capital expenditure and modernisation. After the implementation of One-Rank-One-Pension scheme from 2014-15, military salaries and pensions ballooned, accounting for more than half the annual defence budget. This was clearly unsustainable. For comparison, China had slashed PLA's size from 2.3mn to 2mn. Again, Beijing's aim was to have a nimbler, tech-savvy, and more integrated force.

Hence, GOI's attempt to undertake a similar revamp was welcome. However, the Agnipath idea had to navigate Indian realities. First, for many young Indians coming from states such as UP, Uttarakhand, Himachal, Punjab – note, these states will go to polls over the coming year – a permanent army job is both a family tradition, and an opportunity for social mobility. Thus, the only way the first iteration of Agnipath could have worked is if 75% of Agniveers, who were to be demobilised after four years, got good civilian jobs, ideally fitting their profile. Such jobs, however, have failed to materialise.

Second, there were also concerns within the military that demobilisation of a bulk of Agniveers after just four years was disruptive, since it took longer to fully train soldiers for modern warfare. Plus, cohesion was flagged as an issue, with Agniveers serving alongside permanent recruits, in the same units and performing the same tasks, but with huge disparity in benefits for the two categories. Third, there were concerns that demobilised and trained Agniveers would be susceptible to being roped in by anti-social groups, or even mercenaries.

Against this backdrop, GOI's decision to now offer two additional years of service for 75% of Agniveers, followed by potential permanent recruitment thereafter, addresses many of these concerns. However, the fundamental issue – ballooning salary and pension bills – will remain untackled. Clearly, going back to status quo ante, or something close to it, for all time will handicap an army that faces hostile challenges on two borders. Should annual intake be reduced, if not at one go, then over, say, five years? It's a thought. Of course, were there enough civilian jobs that paid reasonable salaries to semi-skilled young people, the problem would disappear. But that's India's biggest challenge, with no solution in sight.

दैनिक भास्कर

Date: 06-11-26

ट्रम्प की 'वीटों' धमकी कितनी कारगर होगी?

संपादकीय

मिड-टर्म चुनाव में रिपब्लिकन पार्टी की दोनों सदनों में हार के तत्काल बाद ट्रम्प ने सोशल मीडिया पर एक लाल 'मागा' टोपी पोस्ट की, जिस पर 'वीटो' लिखा था। चुनाव के दो दिन पहले भी उन्होंने एक इंटरव्यू में कहा था कि अगर उनकी पार्टी हारी तो वे 'मिस्टर वीटो रणनीति अपनाएंगे। यह सच है ऐसे वीटो को प्रभावहीन करने के लिए सदनों में दो-तिहाई बहुमत चाहिए, जो डेमोक्रेट्स के पास नहीं है। अमेरिकी संविधान निर्माताओं ने फ्रेंच दार्शनिक मॉंटेस्क्यू के 'चेक एंड बैलेंस' सिद्धांत के तहत जहां राष्ट्रपति को ताकतवर बनाया था, वहीं कांग्रेस को बिल बनाने और दो-तिहाई बहुमत से राष्ट्रपति के वीटो को रोकने की शक्ति भी दी थी। चुनाव परिणामों पर उपराष्ट्रपति जेडी वेंस ने कहा कि ईरान युद्ध, इजराइल से नजदीकी और महंगाई हार के कारण हैं। ट्रम्प ने जवाब दिया, युद्ध अपरिहार्य था। अमेरिकी कांग्रेस भले राष्ट्रपति की संवैधानिक शक्तियों और ट्रम्प की वीटो धमकी के आगे उतनी प्रभावी भले न हो, लेकिन अब ट्रम्प न तो मनमानी कर सकेंगे और न ही उनके मातहत संस्थाएं उनके गलत आदेशों को यथावत मानेंगी। अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट राष्ट्रपति के वीटो को रद्द तो नहीं कर सकता, लेकिन वीटो की प्रक्रिया के गुण-दोषों पर फैसला जरूर दे सकता है। ट्रम्प ने अगर ईरान पर बड़ा हमला किया तो उनकी ही पार्टी खिलाफ हो सकती है और तब महाभियोग भी सम्भव होगा।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 06-11-26

खाद्य सब्सिडी पर हो पुनर्विचार

ए के भट्टाचार्य



वर्ष 2027-28 का केंद्रीय बजट पेश होने में तीन महीने से भी कम समय बचा है। बजट को लेकर अंतर-मंत्रालयी परामर्श और उद्योग जगत, व्यापार जगत और किसान प्रतिनिधियों के साथ चर्चा भी शुरू हो गई है या होने वाली है। ऐसे में आने वाले बजट से उम्मीदें पहले ही काफी जोर पकड़ चुकी हैं। ऐसा केवल इसलिए नहीं है कि भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) ने विदेशी पोर्टफोलियो निवेशकों (एफपीआई) के लिए दीर्घकालिक पूंजीगत लाभ कर (एलटीसीजी) हटाने की मांग की है बल्कि इसलिए भी कि वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने सावधानी भरा बयान देते हुए कहा है कि सरकार विदेशी निवेश को टिकाऊ बनाने की चिंताओं से अवगत है और इसे लेकर बाजार की चिंताओं से भी।

शेयर बाजार ने सकारात्मक प्रतिक्रिया दी है। बाजार को उम्मीद है कि 1 फरवरी को पेश होने वाले केंद्रीय बजट में परिसंपत्तियों से होने वाले एलटीसीजी पर कर व्यवस्था में संशोधन किया जाएगा। वहीं सरकारी अधिकारी ऐसे बयान दे रहे हैं, जिनमें और अधिक सुधारों की आवश्यकता पर जोर दिया जा रहा है। इन बयानों ने भी आगामी बजट से उम्मीदें बढ़ा दी हैं। पिछले सप्ताह मुख्य आर्थिक सलाहकार (सीईए) वी. अनंत नागेश्वरन ने एक महत्त्वपूर्ण संबोधन में मौजूदा चुनौतियों के बीच भारत के आर्थिक नीति-निर्माताओं के सामने मौजूद आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं को रेखांकित किया। उनके संबोधन की सुर्खियां वर्ष 2026 की मौजूदा आर्थिक चुनौतियों की तुलना उन चुनौतियों से करने पर केंद्रित रहीं जिनका सामना भारत ने 1991 में किया था। उस समय भी संरचनात्मक और बाहरी चुनौतियां उतनी ही गंभीर थीं जितनी आज हैं। सीईए ने जो नीतिगत सुझाव दिए, विशेष रूप से देश की आर्थिक वृद्धि और औद्योगिक रणनीतियों पर नए सिरे से विचार करने की जरूरत से जुड़े सुझाव, वे गंभीरता से विचार किए जाने योग्य हैं। आयात प्रतिस्थापन यानी आयात पर निर्भरता घटाने, घरेलू विनिर्माण को मजबूत करने और निर्यात की प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ाने के लक्ष्यों को एक साथ हासिल करने के लिए नीतिगत दृष्टिकोण पर नए सिरे से विचार करना होगा।

नीति आयोग के सदस्य राजीव गौबा के हालिया बयानों ने शहरी प्रशासन व्यवस्था में व्यापक बदलाव की उम्मीदें जगाई हैं। इनमें शहरी स्थानीय शासन निकायों को अधिक अधिकार देना, पांच साल के कार्यकाल वाले महापौरों का प्रत्यक्ष चुनाव, शहरी स्थानीय निकायों को अधिक वित्तीय स्वायत्तता देना और शहरों एवं कस्बों में एकीकृत भूमि उपयोग नियोजन लागू करना शामिल है। पिछले कई वर्षों से केंद्रीय बजट केवल राजकोषीय मामलों तक सीमित नहीं रहा है, बल्कि इसमें सरकार की समग्र विकास नीतियों की रूपरेखा भी प्रस्तुत की जाती रही है। गौबा का यह कहना कि शहरों का प्रभावी संचालन राज्यों की राजधानियों से नहीं किया जा सकता, आवश्यक प्रशासनिक सुधारों की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए। शहरों की स्थानीय विकास संबंधी समस्याओं का समाधान करने के लिए शहरी निकायों को पर्याप्त अधिकार, संसाधन और संस्थागत क्षमता उपलब्ध करानी होगी।

आगामी केंद्रीय बजट एक ऐसा खाका तैयार कर सकता है, जिससे 74वें संविधान संशोधन अधिनियम के तहत सूचीबद्ध सभी 18 कार्य शहरी स्थानीय निकायों को सौंपे जा सकें। राज्यों को इस बात के लिए प्रेरित किया जा सकता है कि वे शहरी स्थानीय निकायों को मास्टर प्लान तैयार करने, जलापूर्ति, अग्निशमन सेवाओं और यातायात प्रबंधन जैसे मामलों पर निर्णय लेने के लिए सशक्त बनाएं। इन कार्यों पर फिलहाल अधिकांश राज्य सरकारों का नियंत्रण है।

शासन व्यवस्था से आगे बढ़कर एक ऐसा महत्त्वपूर्ण मुद्दा भी है जिस पर केंद्रीय बजट में सरकार की राजकोषीय स्थिति को मजबूत करने के लिए ध्यान देना चाहिए। यह सुधार खाद्य सब्सिडी के क्षेत्र में किया जाना चाहिए। इसकी आवश्यकता अक्टूबर में जारी विश्व बैंक की एक रिपोर्ट से सामने आई है।

रिपोर्ट के अनुसार 2011 से 2023 के बीच निम्न-मध्यम आय वाले देशों के लिए निर्धारित मानक (प्रतिदिन 4.2 डॉलर का उपभोग) के आधार पर गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले भारतीयों की आबादी का अनुपात 57.7 फीसदी से घटकर 16.1 फीसदी रह गया। विश्व बैंक की रिपोर्ट में एक अन्य आंकड़ा भी दिया गया है, जिसके मुताबिक इसी अवधि में भारत में अत्यधिक गरीबी (निम्न आय वाले देशों के लिए निर्धारित प्रतिदिन 3 डॉलर के उपभोग के आधार पर मापी गई) 27.1 फीसदी से घटकर 2.6फीसदी रह गई।

मगर भारत में गरीबी के आकलन के लिए प्रासंगिक आंकड़ा वह है जो देश की कुल आबादी में गरीब लोगों की हिस्सेदारी घटकर 16.1 फीसदी रह जाने को दर्शाता है। भारत जैसे निम्न-मध्य आय वाले देश में गरीबी के स्तर को मापने के लिए प्रतिदिन 4.2 डॉलर के उपभोग का मानक ही उपयुक्त पैमाना है। गरीबी के स्तर में आई इस गिरावट के कारणों और भारत में असमानता के स्तर पर इसके प्रभाव को लेकर कई सवाल उठाए जा रहे हैं। गरीबी में आई इस कमी से एक और नीतिगत बहस शुरू होनी चाहिए। यह बहस उस योजना को लेकर है जिसके तहत 80 करोड़ से अधिक लोगों को मुफ्त खाद्यान्न उपलब्ध कराया जा रहा है।

2011 में जब विश्व बैंक के अनुसार भारत में गरीबी का स्तर 57.7 फीसदी था, तब देश में मुफ्त खाद्यान्न उपलब्ध कराने की कोई योजना नहीं थी। कोविड महामारी के मद्देनजर मार्च 2020 में मुफ्त खाद्यान्न योजना शुरू की गई थी। जनवरी 2023 में इसमें मामूली बदलाव करते हुए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के तहत आने वाले सभी लाभार्थियों को 12 महीने की अवधि के लिए इसके दायरे में शामिल कर लिया गया जबकि उस समय तक कोविड का खतरा समाप्त हो चुका था। इसके बाद जनवरी 2024 से कुछ सप्ताह पहले घोषणा की गई कि मुफ्त खाद्यान्न योजना अगले पांच वर्षों तक जारी रहेगी। इस तरह भारत की कुल आबादी के 57 फीसदी से अधिक हिस्से को मुफ्त खाद्यान्न मिलने लगा जबकि देश में गरीबी की दर महज 16 फीसदी है।

केंद्र सरकार के लिए, मुफ्त अनाज योजना का खर्च काफी अधिक है। खाद्य सब्सिडी का अनुमान हर साल 2 लाख करोड़ रुपये से अधिक है, जो सरकार के कुल वार्षिक व्यय का चार फीसदी से भी ज्यादा है। खाद्य सब्सिडी पूरी तरह समाप्त नहीं की जा सकती। लेकिन यदि मुफ्त खाद्यान्न योजना का लाभ केवल गरीबों तक सीमित

कर दिया जाए तो इस पर होने वाले खर्च में काफी कमी लाई जा सकती है। ऐसे किसी भी कदम का राजनीतिक विरोध होगा क्योंकि इससे सत्तारूढ़ दल को चुनावी नुकसान उठाना पड़ सकता है।

जिस सरकार ने यूनिफाइड पेमेंट्स इंटरफेस (यूपीआई) के जरिये किए जाने वाले चुनिंदा लेनदेन पर मर्चेंट डिस्काउंट रेट (एमडीआर) दोबारा लागू करके शक्तिशाली खुदरा कारोबारियों के दबाव का सामना करने का साहस दिखाया है, उम्मीद है कि वह इसी तरह का प्रयास करते हुए ऐसी मुफ्त खाद्यान्न योजना भी लागू करेगी, जिसका लाभ केवल गरीब और जरूरतमंद लोगों को मिले। सरकार ने इस साल एग्रीस्टैक और अन्य डिजिटल प्लेटफॉर्म के इस्तेमाल से उर्वरक बिक्री को किसानों के भूमि रिकॉर्ड से सफलतापूर्वक जोड़ दिया है। इस खरीफ सीजन में उर्वरकों की बिक्री में 37 फीसदी से अधिक की गिरावट आई। इस नई व्यवस्था ने बड़े पैमाने पर उर्वरकों को गैर-कृषि क्षेत्रों और पड़ोसी देशों में भेजे जाने पर रोक लगाई है, जहां उर्वरकों की कीमतें कहीं अधिक हैं। इससे सरकार के उर्वरक सब्सिडी के बिल को कम करने में भी मदद मिली है।

उम्मीद है कि प्रस्तावित एमडीआर दीवाली के बाद लागू कर दिया जाएगा और भूमि रिकॉर्ड से उर्वरक बिक्री को जोड़ने वाली योजना को जारी रखा जाएगा। साथ ही बटाईदार किसानों की चिंताओं का समाधान करने के बाद इसका दायरा बढ़ाकर अधिक किसानों को इसमें शामिल किया जाएगा। चालू वित्त वर्ष की पहली छमाही में खाद्य और उर्वरक सब्सिडी के खर्च को अब तक नियंत्रित रखा गया है। इस दौरान इसमें 13 फीसदी की वृद्धि हुई है, जबकि पूरे वर्ष के लिए 18फीसदी की वृद्धि का अनुमान लगाया गया था।

ऊर्जा की कीमतों के उतार-चढ़ाव को देखते हुए सरकार को सब्सिडी से जुड़े ये सुधार लागू करने चाहिए, ताकि इस वर्ष और 2027-28 के दौरान व्यय के अन्य मदों में बजट से अधिक खर्च होने की स्थिति में कुछ राहत मिल सके।

Live हिन्दुस्तान.com

Date: 06-11-26

न्याय सुनिश्चित हो

संपादकीय



वर्ष 2026 में विवाद की हद तक चर्चित रहे यूजीसी समानता संबंधी नियमों पर केंद्र सरकार ने पुनर्विचार के संकेत दिए हैं, तो आश्चर्य नहीं। अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के छात्रों के हित में ये नियम विश्वविद्यालय परिसरों में न्याय सुनिश्चित करने के लिए 13 जनवरी को अधिसूचित किए गए थे, लेकिन इन पर शिकायतों की बौछार हो गई थी। इन शिकायतों के मद्देनजर ही सर्वोच्च न्यायालय ने 29 जनवरी को इन नियमों को लागू करने पर रोक लगा दी थी। उसके बाद से सरकार पर दोतरफा दबाव बना हुआ है और वह अनिर्णय में दिखती रही है। जहां दलित-आदिवासी संगठन इसे लागू कराने के लिए दबाव बढ़ाते रहे हैं, तो समाज के बाकी वर्गों में इन नियमों को लेकर असंतोष और नाराजगी बनी हुई है। इन नियमों के खिलाफ जगह-जगह प्रदर्शन भी हुए हैं। खैर, सरकार ने गुरुवार को सर्वोच्च न्यायालय को बता दिया है कि वह विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के 2026 के समानता संबंधी नियमों पर पुनर्विचार के लिए एक समिति गठित करने पर विचार कर रही है। वंचित वर्गों के लिए विशेष सुविधा अच्छी बात है, लेकिन गैर-वंचित वर्गों के साथ अन्याय होना भी सरासर गलत है।

ध्यान रहे, वंचित वर्ग के छात्रों को न्याय देने के लिए जो व्यवस्था नए यूजीसी समानता नियमों के तहत की गई, उसमें गैर-वंचित वर्गों की पूरी सुनवाई होने पर भी संदेह है। वंचित वर्ग के छात्र की शिकायत गैर-वंचित वर्ग के छात्र के करियर और जीवन पर बहुत भारी पड़ सकती है। एक शिकायत यह भी कि नए नियमों के तहत सुनवाई करने वाले तंत्र में गैर-वंचित वर्गों के लिए कोई जगह नहीं है। न्यायालय में भी यही आशंका जताई गई है कि नए नियमों के अस्पष्ट प्रावधानों का दुरुपयोग होगा और समाज पर खतरनाक असर पड़ेगा। अब भारत के प्रधान न्यायाधीश न्यायमूर्ति सूर्यकांत और न्यायमूर्ति जॉयमाल्य बागची की अध्यक्षता वाली पीठ द्वारा केंद्र सरकार को नियमों की समीक्षा करने की सलाह देने के बाद पुनर्विचार की बात सामने आई है। वैसे भी, केंद्र सरकार के लिए यह मजबूरी है कि वह पुनर्विचार करे और जरूरी संशोधन भी करे, ताकि नए नियमों को न्यायालय की भी हरी झंडी मिल जाए। केंद्र सरकार भी चाहेगी कि यूजीसी के नए नियम समाज में भेदभाव न बढ़ाएं। सवर्णों या पिछड़ों को नाराज करने के अपने राजनीतिक खतरे हैं। दूसरी ओर, नए नियमों से अगर समाज में अन्याय बढ़ा, तो इससे भी व्यवस्था का पूरा संतुलन बिगड़ जाएगा। गौरतलब है, एसटी-एससी ऐक्ट से भी बहुत शिकायतें रही हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने इन शिकायतों को दूर करने की कोशिश की थी, पर सरकार ने कानून में ही बदलाव कर दिए। आज की राजनीति ऐसी है कि सरकार अगर ठान ले, तो कानून या नियम एकतरफा बनाए जा सकते हैं, लेकिन दुष्परिणामों का भी आकलन कर लेना चाहिए।

यह देखना भी न्यायालय का ही काम है कि किसी कानून या नियम का दुरुपयोग न हो। क्या एससी-एसटी ऐक्ट में झूठी शिकायतों के खिलाफ कार्रवाई का यथोचित प्रावधान है? क्या यूजीसी समानता संबंधी नए नियमों में झूठी या सच्ची शिकायतों के विरुद्ध कोई सख्त प्रावधान है? किसी कानून का एक ओर ज्यादा झुका होना न्यायालय

की निगाह में आना चाहिए, लेकिन उससे पहले उन लोगों को सावधान रहना होगा, जो इस तरह के एकतरफा कानून या नियम बनाते हैं। दलितों-वंचितों को न्याय दिलाने वाले कानून बहुत कड़े हों, लेकिन उनका सदुपयोग भी सुनिश्चित होना चाहिए।